Research Chronicler: International Multidisciplinary Refereed Peer Reviewed Indexed Research Journal
ISSN: Print: 2347-5021 www.research-chronicler.com ISSN: Online: 2347-503X

डॉ. गिरीश रस्तोगी व्यक्तित्व एवं रंगांदोलन

डॉ. नेहा मिश्रा

ठाकुर कॉलेज ऑफ़ साइंस एंड कॉमर्स, कांदिवली (ई) मुंबई, ((महाराष्ट्र) भारत

सूर्योदय से जिस प्रकार अंधकार दूर हो जाता है, चारों तरफ प्रकाश फैल जाता है और कलियाँ खिलने लगती हैं उसी प्रकार प्रोफेसर गिरीश रस्तोगी जी के आगमन से हिंदी नाट्य-साहित्य अंधकार मुक्त, पुष्पित, पल्लवित और विकसित हुआ है |

"अगर हम कुछ करना चाहते हैं तो कारणों के लिए रोना बेकार है|" ऐसी विचारधारा रखने वाली प्रो. रस्तोगी जी ने कठिन परिस्थितियों में अपने कर्मों से अपने व्यक्तित्व को निखारकर दैदीप्यमान सूर्य की भाँति हिंदी नाट्य साहित्य को रोशन किया विशेषकर गोरखपुर जैसे साधनहीन शहर में जहाँ न कोई प्रेक्षागृह, न दर्शक, न पैसा, न अभिनेता जहाँ शुद्ध रंगमंच की कोई कल्पना भी न थी, ऐसे छोटे शहर में उन्होंने रंगमंच तथा रंग आंदोलन को स्थापित करने का साहस किया |राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त करने वाली डॉ. गिरीश रस्तोगी कवि, कहानीकार, नाटककार, समीक्षक, रंगकर्मी एवं प्रसिद्ध निर्देशक भी थीं |विश्व साहित्य के साथ अपने अनुभवों को विकसित करने वाली प्रो. रस्तोगी ने पश्चिम के नाटकों एवं रंगमंच का अध्ययन किया| विश्व हिंदी दिवस के अवसर पर 14 जनवरी 2006 को लंदन में मुख्य अतिथि के रूप में विश्व मंच पर हिंदी की दीप प्रज्वलित कर संपूर्ण विश्व में हिंदी का दीप प्रज्वलित रहने का संदेश देने वाली प्रो. रस्तोगी का जन्म 12 जुलाई सन् 1935 में उत्तर प्रदेश के, बदायूँ शहर के फरशोली मुहल्ले में हुआ था | उनके पिता श्री भगवत स्वरूप रस्तोगी वकील थे| माता श्रीमती शिक्षा देवी रस्तोगी ने उनके व्यक्तित्व को सजाने, संवारने और आगे बढ़ाने में बहुत परिश्रम किया| रस्तोगी जी ने सर्वप्रथम रामगोपाल सिंह चौहान द्वारा निर्देशित नाटक सम्राट अशोक में 'तिष्यरक्षिता' की भूमिका किया| जिसमें रस्तोगी जी को पहली बार रंगमंच को समझाने का और अभिनय करने का मौका मिला| एम॰ एड॰ में लखनऊ विश्वविद्यालय से नैनीताल शरदोत्सव में नाट्याभिनय का दूसरा अवसर प्राप्त हुआ जिसमें जगदीशचंद्र माथुर की एकांकी 'रीढ़ की हड्डी' में मुख्य भूमिका कीं| एम॰एड॰ पूरा होते ही रस्तोगी जी अपने पति के पास गोरखपुर आ गयीं और सन् 1961 में गोरखपुर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्राध्यापक के रूप में अपना अध्यापन जीवन प्रारंभ कीं| विश्वविद्यालय में ही रस्तोगी जी नई दिशा की ओर अग्रसर होकर अपने बहुआयामी व्यक्तित्व का विकास किया|

हिंदी नाट्य साहित्य और रंगमंच को विकट परिस्थितियों से, समस्याओं से और पारसी रंगमंच से संबंधित अंधविश्वास कुप्रथाओं से भारतीय नाट्य साहित्य और रंगमंच को मुक्त करके तथा प्रसाद के नाटकों

को भी मंच पर प्रस्तुत कर हिंदी रंगमंच को अन्य भारतीय रंगमंच के समक्ष स्थान प्रदान करने में डॉ॰ गिरीश रस्तोगी का महत्वपूर्ण स्थान है| उन्होंने न केवल हिंदी नाटक और रंगमंच उन्नत किया अपितु नाट्य-समीक्षा, नाट्य रूपांतर, नाट्य-लेखन तथा कविता लिखकर हिंदी साहित्य का बहुपक्षीय विकास भी किया| हिंदी रंगमंच को उन्नत करने के लिए डॉ॰ गिरीश रस्तोगी ने सन् 1968 में 'रूपांतर' नाट्य मंच की स्थापना कीं | उन्होंने नाटक की कसौटी रंगमंच को माना है |

बहुमुखी प्रतिभा की धनी डॉ॰ रस्तोगी ने 'रूपांतर' संस्था में अत्यंत सफल प्रस्तुतियाँ की हैं| सन् 1968 में उनका पहला प्रदर्शन 'लहरों के राजहंस' से प्रारंभ होकर अंतिम प्रदर्शन 2010 में 'गाँधी को फाँसी दो' था| उन्होंने लहरों के राजहंस, आषाढ़ का एक दिन, परमात्मा का कुत्ता, मुनादी, बाकी इतिहास, एक और द्रोणाचार्य, प्रलय की छाया, बकरी, एक था गधा, अंधेर नगरी, एक चिथड़ा सुख, खिड़या का घेरा, नहुष, कथा एक कंस की, अंधायुग, एक घूँट, अकलंक, जयदोल, मैंने कुछ नहीं देखा, छिन्नमस्ता, और अंत में प्रार्थना, इला, नागमंडल, यशोधरा, मोहन राकेश के तीनों नाटक आषाढ़ का एक दिन, लहरों के राजहंस, आधे-अधूरे का सम्मिलित प्रस्तुति, राग दरबारी तथा बाणभट्ट की आत्मकथा जैसी सफल नाट्य प्रस्तुतियाँ कीं हैं|

रस्तोगी जी ने रूपांतर नाट्य मंच पर सिर्फ नाटकों का ही नहीं अपितु नाटक, कविता, कहानी, उपन्यास का नाट्यरूपांतर कर विभिन्न प्रस्तुतियाँ कीं तथा अपने अनुभव से ज्ञान का विस्तार करके अपने लेखन में रंगमंचीय विचारों को व्यक्त कर हिंदी नाटक और रंगमंच को समृद्ध स्वरूप प्रदान किया| उनका मानना था कि रंगमंच को संकुचित अर्थ में न लेकर व्यापक अर्थ में लेना होगा तभी हिंदी रंगमंच विकसित और समृद्ध होगा| रस्तोगी जी ने नाटकों के प्रस्तुतिकरण में किसी भी रंगमंच परंपरा का न ही अंधानुकरण किया और न ही किसी परंपरा का विरोध| नाटकों की माँग के अनुसार जो उचित होता वही करती थीं| उन्होंने अपने नाटकों के माध्यम से हमारे समाज के वर्तमान समस्याओं की वास्तविक स्थिति से लोगों को न सिर्फ रूबरू कराया अपितु उन समस्याओं पर सोचने के लिए विवश भी किया|

हिंदी नाटक और रंगमंच का विकास अन्य भारतीय भाषाओं के नाटक और रंगमंच की तरह नहीं हो सका क्योंकि हिंदी नाटक और रंगमंच के बीच बड़ी गहरी खाई वर्षों तक बनी रही| पिछले कुछ वर्षों से नाटककार ने नाटक को पहचाना, नाटक की समीक्षा के प्राचीन प्रतिमान को आधुनिक रूप में बदलने का प्रयत्न किया है| रस्तोगी जी नाटक में कथानक और पात्रों के सामन्जस्य को आवश्यक मानती हैं| कथानक को रोचक और प्रभावपूर्ण होने के साथ ही पात्रों में जीवंतता और संवादों की सुव्यवस्था को बहुत महत्त्व देती हैं| संवादों से ही पात्रों के व्यक्तित्व की विशेषताएँ उभरकर आती हैं| नाटक व्यक्ति विशेष के लिए नहीं होता बल्कि एक समुदाय के लिए होता है, अतः वह नाटक की समीक्षा भी दर्शक समुदाय की दृष्टि से करने की बात करती हैं | प्रत्येक देश की रंगमंचीय व्यवस्था के अनुरूप ही

नाट्य-रचना होती है | नाटक में व्यक्त रंगमंच की कल्पना, अभिनय पद्धति विकास सूत्रों को प्रकाशित कर सृजनशीलता की ओर उन्मुख होते हैं जिससे रंगमंच में महत्वपूर्ण मोड़ और परिवर्तन आता है| इन महत्वपूर्ण मोड़, खोज और परिवर्तन को रंगमंच पर लाने में रंगकर्मियों, अभिनेताओं और निर्देशकों का सामूहिक सहयोग और परिश्रम होता है| रंगमंच पर नाटक के प्रभावपूर्ण प्रस्तुति के लिए सही उच्चारण के साथ ही भाषा का लयात्मक, ध्वन्यात्मक प्रवाह, विशेष व्यंजना, विशेष लय तथा लय और शब्दों के न होने पर भी बीच का मौन बहुत कुछ कहता है को महत्त्व देती हैं क्योंकि नाटक पढ़ने से ज्यादा रंगमंच पर महसूस होता है | लिखित शब्द निर्देशन तथा अभिनेता के उच्चारण के दौरान रंगमंचीय भाषा उत्पन्न होती है|

रस्तोगी जी बच्चों को भी रंगमंच और अभिनेयता से अवगत कराना तथा नाटक और रंगमंच को शिक्षा प्रणाली का अंग बनाकर कॉलेज और विश्वविद्यालय में प्रेक्षागृह की व्यवस्था करना चाहती थीं पर किन्हीं कारणों से संभव न हो सका| उनका मानना था कि जिस प्रकार कालिदास से संस्कृत,शेक्सपीयर से अंग्रेजी और ब्रेख्त से जर्मन नाटक और रंगमंच की पहचान बनी है उसी प्रकार प्रसाद के नाटकों से हिंदी नाटक और रंगमंच की पहचान बन सकती थी डॉ. गिरीश रस्तोगी साहित्य और नाटक को भिन्न नहीं मानती थीं, जो लोग नाटक और रंगमंच को भिन्न मानते थे तथा रंगकर्म की उपेक्षा करते थे उनसे बहुत दुखी रहती थीं| रस्तोगी जी अपनी कृतियों, समीक्षा-ग्रंथो, नाटकों, उपन्यासों, कहानियों, कविताओं, नाट्य प्रस्तुत्तियों, विभिन्न रंगान्दोलनों, बहसों, अपने संस्मरणों, आत्मकथाओं तथा साक्षात्कारों के माध्यम से अनेक मूलभूत प्रश्नों और समस्याओं को साहित्यकारों बुद्धिजीवियों के सामने रखती थीं जिससे विद्वतजन अनभिज्ञ थे | इनका मानना है कि हिंदी नाट्य लेखन और रंगकर्म के सामने सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है कि-मौलिक नाटक की समस्या क्या है?, समकालीन रंगकर्म में हिंदी का मौलिक नाटक कहाँ और क्यों खोता जा रहा है? क्यों अनुवादों और रूपान्तरों की प्राथमिकता है? नाटक लेखन की जो समृद्ध परंपरा पचास-साठ के दशक में चली थी उसका आज लोप क्यों होता जा रहा है? वे नाटक और रंगमंच के जरिये विश्व के सभी मनुष्यों को जोड़ना चाहती थीं जो इस समय के परिवेश के लिए अत्यंत आवश्यक है|

रस्तोगी जी को हिंदी नाटक और रंगमंच के प्रति प्रेम तथा उसे उन्नत करने के लिए महादेवी वर्मा पुरस्कार, उत्कृष्ट निर्देशन पुरस्कार, आचार्य रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार, सुभद्रा कुमारी चौहान पुरस्कार, भारत रंग महोत्सव पुरस्कार, अवन्तिबाई सम्मान आदि से सम्मानित किया गया|

79- 80 वर्ष की आयु में भी डॉक्टर रस्तोगी जी सक्रिय थीं तथा उनमें साहित्य सृजन की उत्कट अभिलाषा थी किंतु लंबे समय से शारीरिक रूप से अस्वस्थ होने के कारण 16 जनवरी सन् 2015 दिन शुक्रवार को इलाहाबाद में 80 वर्ष की आयु में भी हिंदी साहित्य और रंगमंच के प्रति समर्पित लेखिका एवं रंगकर्मी डॉ गिरीश रस्तोगी रूपी सूर्य अस्त हो गया, लेकिन इनके तेज से हिंदी नाट्य- साहित्य सदैव प्रकाशित रहेगा|

सन्दर्भ :

1. गिरीश रस्तोगी: नाट्य लेखन और रंगकर्म – शोधग्रन्थ-त्रिपाठी सरस्वतीमणि
2. रूपांतर स्मारिका
3. नाट्य चिन्तन और रंगदर्शन अन्तर्सम्बन्ध – गिरीश रस्तोगी
4. समकालीन हिंदी नाटक की संघर्ष चेतना - गिरीश रस्तोगी
5. हिंदी रंगमंच के विकास में गिरीश रस्तोगी का योगदान–शोधग्रन्थ–त्रिपाठी वृन्दा
6. बीसवीं शताब्दी का हिंदी नाटक और रंगमंच : आत्मकथा-गिरीश रस्तोगी